योगदृष्टिसमुच्चय – सटीकनुं ध्यानार्ह संशोधन–सम्पादन

मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय

महान योगाचार्य श्री हरिभद्रसूरि विरचित योगग्रन्थो, भारतवर्षीय प्राचीन योगसमृद्धिनो आपणने सांपडेलो अमूल्य वारसो छे; योगविषयक मौलिक विचारणा, नवली रजूआत, विविध योगपरम्पराओनो सरस समन्वय व. उमदां तत्त्वो तो आ ग्रन्थोमां छे ज, पण एथी वधीने आ ग्रन्थोनुं मुख्य जमा पासुं ए छे के आना प्रणेता स्वयं योगमार्गना नीवडेल साधक छे. एओनी वाणी अनुभवजन्य छे. अने माटे ज आ वाणी हृदयस्पर्शी, आपणने हठात् योग माटे प्रेरे तेवी अनुभवाय छे.

योगदृष्टिसमुच्चय ए हरिभद्रसूरिजीनी कालजयी रचना छे. कदमां नानकडी होवा छतां तेमां रहेला उच्चकोटिना भावो अने अन्यत्र अलभ्य एवा आठ योगदृष्टिनी प्ररूपणा द्वारा करायेला आत्मकल्याणमार्गना विवेचनने लीधे ए योगमार्गना पथिकोने हंमेशां आकर्षती रही छे.

आ ग्रन्थनी स्वोपज्ञ टीका साथेनी ताडपत्र पोथीना आधारे थयेली संशोधित–सम्पादित वाचना हमणां प्रकाशित थई. आम तो आ पूर्वे आ ग्रन्थ अनेकवार प्रकाशित थई चूक्यो छे. एना पर अनेक विवेचनो पण लखायां छे. छतां पण आ ग्रन्थनुं फरी एकवार प्रकाशन थयुं ते बाबत आश्चर्य उपजावे ते स्वाभाविक छे. अने तेथी ज आ लेखमां आ प्रकाशनी जरूरियात, आ वाचनामां अपनावायेली सम्पादनपद्धति, आ प्रकाशनी ध्यानार्हता व. जणाववा प्रयत्न करेल छे.

आ प्रकाशनी जरूरियात

वि.सं. २०६५ ना चातुर्मास दरमियान पूज्य गुरुभगवन्त आ. श्रीशीलचन्द्रसूरिजी म. पासे योगदृष्टिसमुच्चयनुं अध्ययन करवानुं थयुं. आ वखते अमारी पासे बे मुद्रित वाचना हती. १. दिव्यदर्शन ट्रस्ट द्वारा हारिभद्रयोगभारतीमां प्रकाशित २. Prof. L. Suali द्वारा सम्पादित अने

देवचन्द्र-लालभाई-फण्ड द्वारा प्रकाशित. आ बन्ने वाचना ओछेवत्ते अंशे संशोधनार्ह हती. गुरुभगवन्ते केटलुंक संशोधन बन्ने वाचनानी मेळवणी द्वारा तो केटलुंक स्वयंप्रज्ञाथी करेलुं हतुं, परन्तु हजु पण केटलांक स्थळे अर्थसंगति नहोती थती. पाठनी प्रामाणिकता प्रत्ये सन्दिग्धता रहेती हती. आ संजोगोमां गुरुभगवन्तने प्राचीन प्रत जोडे मुद्रित वाचनाने मेळवी जोवानुं मन थयुं, अने सद्भाग्ये विदुषी साध्वी श्रीचन्दनबालाश्रीजीना सहयोगथी योगदृष्टिसमुच्चय-सटीकनी वि.सं. ११४६मां लखायेली ताडपत्र प्रति(खण्डित) अने सम्भवतः १६मा सैकानी कागदप्रति प्राप्त थई.

आ प्रतो साथे मुद्रित वाचनाने मेळवी जोतां पूर्वे करेलुं संशोधन तो प्रमाणित थयुं ज, पण डगले ने पगले नवा शुद्ध पाठ जडता गया. साथे ने साथे घणी जग्याए नवो पाठ उमेरवानो थयो. केटलाक सामान्य भाषाकीय फेरफारवाळा पाठोने ध्यानमां न लहीए तो पण ग्रन्थना भावोना स्पष्टीकरण माटे अनिवार्य गणाय तेवां शुद्धिस्थानो घणां हतां. मुद्रित अशुद्ध के खण्डित पाठने आधारे थयेलुं विवेचनगत अर्थघटन, ग्रन्थकारना कथयितव्यथी घणुं जुदुं पडतुं जणायुं. आ पछी तो अभ्यासीओ सुधी शुद्धवाचना पहोंचाडवानुं मन थाय ए तद्दन स्वाभाविक हतुं. ए इच्छा ज प्रस्तुत प्रकाशनननी जननी बनी.

वि.सं. २०६६नुं वर्ष आगमप्रभाकर मुनिश्री पुण्यविजयजी म.नी दीक्षाशताब्दीनुं वर्ष हतुं. तेनी उजवणीना उपलक्ष्यमां ते महापुरुषनी रुचि अने कार्योने अनुरूप कशुंक करवुं, अने ते रीते वास्तविक उजवणी करवी एवो अध्यवसाय गुरुभगवन्तना चित्तमां जाग्यो. ते अध्यवसायनुं ज स-रस परिणाम एटले प्रस्तुत सम्पादन.

सम्पादन-पद्धति

आ वाचनाना सम्पादनमां मुख्यत्वे त्रण वस्तुओ पर भार मूकवामां आव्यो छे. (१) पाठसंशोधन (२) व्यवस्थित मुद्रण (३) ग्रन्थनी उपादेयतामां वृद्धि.

पाठसंशोधन - प्राचीन लिपिना केटलाक अक्षरोना तेनाथी तद्दन जुदा एवा अत्यारना अक्षरो साथेना सरखापणाने लीधे घणीवार भ्रमपूर्ण वांचन अने तेने परिणामे भ्रामक पाठो सर्जाता होय छे. एमां पण ज्यारे सर्जाता भ्रामक

पाठनी संगति कोइक रीते करवी शक्य होय त्यारे तो एमांथी बचवुं मुश्केल बनी रहे छे. आनुं एक उत्तम उदाहरण श्लोक-१०नी टीकामां जोवा मळ्युं. आमां टीकाकारे सम्यक्त्वनी व्याख्या करतां प्रशमादि सम्यक्त्वनां लिङ्गोनां वर्णननुं तत्त्वार्थभाष्यगत वाक्य उद्धृत कर्युं छे. अने पछी स्पष्टता करी छे के प्रशम-संवेग-निर्वेद-ए रीते सम्यक्त्वनां लिङ्गोनुं कथन प्राधान्यनी अपेक्षाए ज छे. लिङ्गोनी प्राप्ति तो आस्तिक्य-अनुकम्पा-निर्वेद-एम पश्चानुपूर्वीए थाय छे. आ माटे वाक्य छे - ''**यथाप्राधान्यमयमुपन्यासो लाभश्च पश्चानुपूर्व्या**''. आमां 'ला'ने बदले 'चा' पण वांची शकाय तेम होवाथी अने प्राचीन 'भ' अने आजना 'रु' वच्चे कोइ ज तफावत नहीं होवाथी वांचवामां आव्युं - ''**चारुश्च पश्चा०**' पछी आगळ च होय तो विसर्गनो ओ थवो सम्भवित नहीं होवाथी पाठ सुधारवामां आव्यो- '**०न्यासः चारुश्च पश्चा०** आ पाठने अनुसारे लखायेला विवेचनोमां आ क्रमनी चारुता अने प्राधान्यापेक्षी क्रमनी अचारुता पण प्रतिपादित करवामां आवी ! संशोधकोए ''**०न्यास आचारश्च पश्चा०**'' एवो पाठ पण सूचव्यो !! वात क्यांनी क्यां पहोंचे छे !

घणी वार आपणी आंख अल्पपरिचित शब्दने स्थाने समानता धरावतो अने वाक्यमां संगत थई शके तेवो अतिपरिचित शब्द वांची ले छे. अने जो एवुं व्यापकपणे बने तो मूळ शब्दनुं स्थान ए हदे जोखमाय छे के काळक्रमे आवो शब्द अहीं होवो जोइए एवी सम्भावना पण कोइने नथी लागती. जेमके श्लोक-४७ नी ३-४ पंक्ति - ''**चित्रा सतां प्रवृत्तिश्च, साऽशेषा ज्ञायते कथम् ?**'' आमां 'साऽशेषा'ना स्पष्टीकरण माटे टीका छे - ''**तदन्यापोहतः**''. हवे उपरोक्त पंक्तिओनुं विवेचन करवानुं थाय त्यारे '**तदन्यापोहतः**' शब्दने नजरअन्दाज करीने अर्थ करवामां आवे छे **:** 'मुनिओनी चैत्यवन्दनादि विविध प्रवृत्तिओ समग्रपणे कई रीते जाणी शकाय ?'' आ अर्थमां बे असंगति छे **:** १. 'अशेष' नो अर्थ '**साकल्येन**' थाय नहीं के '**तदन्यापोहतः**' २. तारा जेवी प्रारम्भिक कक्षानी दृष्टिमां समग्र सत्प्रवृत्तिना ज्ञाननुं प्रयोजन पण नथी. हवे ताडपत्रीय पाठ जुओ - ''**सा ह्येषा ज्ञायते कथम् ?**'' आमां 'हि = एव = तदन्यापोहतः' पण संगत थई जाय छे. अने तारादृष्टिने उचित तात्त्विक अर्थघटन पण तारवी शकाय छे के - ''मुनिओनी प्रवृत्तिओ चैत्यवन्दनादि

विविध प्रकारनी होय छे. माटे **एषा** = आ प्रवृत्ति = प्रस्तुत प्रवृत्ति **सा हि** = मुनिओने मान्य ज हशे, अमान्य नहीं होय, तेवुं कई रीते जाणी शकाय ?'' आवी तारादृष्टिवाळा जीवनी विचारणा होय छे.' **'ह्येषा'** ने बदले **'शेषा'** वांचवाथी ऊभी थयेली भ्रान्ति ग्रन्थकारना आशयथी आपणने केटले दूर लई जाय छे !

संशोधकोनी संशोधनदृष्टि प्राय: उपकारक ज बनी रहे छे. पण प्राय: शब्द सूचवे छे तेम कोइकवार हानिकारक पण थाय छे. श्लोक ८२ मां मूळपाठ हतो – **''आत्मानं पान्सयन्त्येते''** जड लोको पापरूपी धूळथी आत्माने खरडे छे – एवो एनो भाव हतो. हवे हस्तलिखितमां 'न्' नो अनुस्वार लखातो हतो– **'पांसयन्त्येते'**. आमां जो कोइक कारणे अनुस्वार न वंचाय तो **'पासयन्त्येते'** वंचातुं हतुं, जे स्वाभाविक रीते संशोधकोने संशोधन माटे प्रेरे तेम हतुं. हस्तप्रतोमां सामान्यत: 'श' अने 'स' वच्चे अराजकता प्रवर्तती हती, तेथी अहीं पण एम ज हशे एवुं समजी **'पाशयन्त्येते'** एम सुधारवामां आव्युं. **'आत्मानं पाशयन्त्येते'** ए वाक्यनो 'आत्माने बन्धनग्रस्त बनावे छे' एम अर्थ पण बेसाडी देवामां आव्यो. आ संशोधने **'पान्सयन्ति'** सुधी पहोंचवानी सम्भावनाने पण नष्ट करी नांखी. आश्चर्यनी वात तो ए छे के आजे पण आ पंक्तिनुं 'आत्माने पापरूपी धूळथी जड लोको बांधे छे' एवुं धरार विवेचन करती वखते ए पण नथी विचारवामां आवतुं के धूळथी बांधी कई रीते शकाय ?

पाठ नक्की करती वखते तर्कबद्ध विचारणा अने अन्य ग्रन्थोना सन्दर्भ पर पण आधार राखवानो थयो. श्लोक १७८-पंक्ति ३ **'सात्मीकृतप्रवृत्तिश्च'** जोइए के **'सात्मीभूतप्रवृत्तिश्च'** ? ए प्रश्न थयो. 'कृ' अने 'भू' बन्ने वांची शकाय तेम होवाथी नक्की करवुं मुश्केल हतुं. हवे आ पंक्ति असङ्गानुष्ठान नामना श्रेष्ठतम योगने वरेला योगीनी धर्मप्रवृत्ति केवी होय ते जणावे छे अने एना स्पष्टीकरण माटे टीकामां चन्दनगन्धन्याय अपायो छे. विचार ए आव्यो के चन्दनमां गन्ध आत्मसात् ज होय के ए गन्धने आत्मसात् करे ? स्पष्ट छे के चन्दनमां गन्ध आत्मीभूत होय अने तेथी पाठ पण **'सात्मीभूतप्रवृत्तिश्च'** जोइए. षोडशकमां पण **'सात्मीभूत'** शब्द मळ्यो (१०.७). एथी एने ज स्वीकार्यो.

श्लोक १७० अने १७३ मां टीकानो पाठ मूळमां घूसी गयो हतो तेने काढी मूळ शब्दो यथास्थाने गोठववानुं पण ताडपत्रना आधारे शक्य बन्युं. श्लोक ८ नी टीकामां प्रातिभज्ञानने अन्य दर्शनीओ पण नामान्तरे स्वीकारे छे ए जणावतां एक नाम **नितीरण** आव्युं छे. आ **नितीरण** शब्द कया दर्शननो छे ते ख्याल नहीं आववाथी ए अशुद्ध हशे एम समजी एना **निरीक्षण, तीरण** व. सुधारा सूचवाया छे. ताडपत्रमां आ शब्द पर **'बौद्धानाम्'** एवी टिप्पणी मळी. अने **'नितीरण'** शब्द ज साचो होवानी प्रतीति थई, एथी आनन्द-आनन्द थई गयो. आवा आनन्दपूर्ण अनुभवो तो घणा थया, पण बधाने अहीं वर्णववानी जग्या नथी. एक वातनी खातरी छे के आ सम्पादनने माणनाराने पण एवा ज अनुभव थया वगर नहीं रहे.

एक वातनी स्पष्टता जरूरी छे के ताडपत्रीय भिन्न पाठोने युक्तता चकास्या पछी ज स्वीकारवामां आव्या छे. ज्यां मुद्रित पाठ ज वधु उपयुक्त लाग्यो त्यां मुद्रित पाठने ज उपर राखी ता. पाठने टिप्पणमां मूकवामां आव्यो छे. ज्यां मु. पाठ पण ता. पाठनी जेम ध्यानार्ह लाग्यो त्यां मु. पाठ टिप्पणमां आप्यो छे. अभ्यासीओनी सुविधा माटे तमाम संशोधित पाठोनी एक सूचि पण मूकवामां आवी छे.

व्यवस्थित मुद्रण – आमां विरामचिह्न, अवग्रह, अवतरणचिह्न व.नी योजना अने ग्रन्थप्रतीक, अवतरणिका, उद्धरण व.ना विभागनो समावेश थाय छे. आ बधी बाबत स्वयं भले नानी होय, पण एने लीधे अर्थबोधमां घणीवार मोटो फरक पडी जाय छे. दा.त. श्लोक-१५९नुं अवतरणिकावाक्य श्लोक १५८नी टीकानो अन्तिमवाक्य तरीके मुद्रित थयुं छे. आ वाक्यनो १५८मा श्लोक साथे मेळ गोठववो शक्य ज नथी, छतां वर्षोथी एम ज छपातुं आव्युं छे. श्लोक-९८ टीकामां **प्रेक्षावान्** माटे प्रयोजायेला शब्द **'यथाऽऽलोचित-कारिणां'** नी जग्याए **'यथा लोचितकारिणां'** एवो मुद्रित पाठ केटलो जुदो अर्थ दर्शावे छे !

विरामचिह्नोनी अस्तव्यस्तता केटली मुश्केली सर्जे तेनुं एक श्रेष्ठ उदाहरण श्लोक ९४नी टीकामां जोवा मळ्युं. मुद्रित पाठ आवो हतो – **''कोशपानं विना ज्ञानोपायो नाऽस्त्यत्र = स्वभावव्यतिकरे युक्तिः =**

शुष्कतर्क-युक्त्या । कश्चिदपरो दृष्टान्तोऽप्यस्याऽर्थस्योपोद्बलको विद्यते नवेत्याह - विप्रकृष्टो०'' आनो अर्थ समजवामां बहु मुश्केली पडी हती. एक तो पहेलां कोइ दृष्टान्त अपायुं ज नथी तो अपर दृष्टान्त केवी रीते कहेवाय ? बीजुं मूळ श्लोकमां आवेलो 'यत:' शब्द अहीं दृष्टान्त फक्त निदर्शन माटे नहीं, पण हेतु तरीके छे एम सूचवतो हतो, ज्यारे उपर मुजब तो एनुं अवतरण फक्त निदर्शन माटे थतुं हतुं. प्रश्नोत्तरनी आ रीत पण अयोग्य छे एम न्यायनो सामान्य अभ्यासी पण कही शके तेम हतुं. आ माटे ताडपत्रमां जोयुं तो मूंझवण घटवाने बदले ओर वधी, कारण के एमां **'विद्यते एवेत्याह'** हतुं, जे सूचवतुं हतुं के **'विद्यते नवेत्याह'** ए अर्थनी अणसमझने लीधे करवामां आवेलो सुधारो हतो. हवे तो **'कश्चिदपर:'** पण कई रीते जोडवुं ए प्रश्न बन्यो. बहु मथामण करी त्यारे अचानक झबकारो थयो के पाठ आम होवो जोइए - **''कोशपानं विना ज्ञानोपायो नाऽस्त्यत्र = स्वभावव्यतिकरे युक्तित: = शुष्कतर्क-युक्त्या कश्चिदपर: । दृष्टान्तोऽप्यस्याऽर्थस्योपोद्बलको विद्यते एवेत्याह-विप्रकृष्टो०''** आम विरामचिह्नोनी गोठवण बदलवा मात्रथी बधी मूंझवण टळी जाय छे ते स्वयं समजाय तेवुं छे. व्यवस्थित मुद्रण विद्यार्थीनो अडधो श्रम ओछो करी नांखे छे ते जातअनुभवनी वात छे अने अहीं माटे ज एना पर एटलो भार मूकवामां आव्यो छे.

ग्रन्थनी उपादेयतामां वृद्धि

योगदृष्टि०मां विषयनिरूपण ए रीते छे के एकमांथी बीजा अने बीजाथी त्रीजा विषयमां प्रवेश थतो रहे. एटले घणीवार एवुं बने के विद्यार्थीने समझण ज न पडे के आ विषयनो मूळ विषय साथे कयो सम्बन्ध छे ? आ मूंझवण टाळवा विस्तृत विषयानुक्रम मूकवामां आव्यो छे.

अभ्यासीओनी सुविधा माटे १. मूळपाठ, २. श्लोकानुक्रमणिका, ३. उद्धृतपाठसूचि, ४. विशेषनामसूचि, ५. विशिष्टविषयसूचि, ६. दृष्टान्तादिसूचि, ७. विशिष्टशब्दसूचि, ८. पारिभाषिक शब्दसूचि, ९. संशोधितपाठसूचि - एवां नव परिशिष्टो मूकवामां आव्यां छे. आमां ७-८ परिशिष्ट अंगे थोडुंक कहेवुं जरूरी लागे छे. श्रीहरिभद्रसूरिजीना वाङ्मयनी भाषा, शैली, विषयपसंदगी व. तमाम पासां पर बौद्धदर्शननी ऊंडी असर जणाय छे. तेओए ललितविस्तरादि ग्रन्थोमां

जे रीते बौद्धोनो सबळ प्रतीकार कर्यो छे ते जोतां बौद्ध ग्रन्थोनुं गम्भीर अध्ययन तेओए कर्युं हशे ते प्रतीत थाय छे. लागे छे के ते दरमियान बौद्धदर्शननी योगसम्बन्धित परिभाषा, विचारणा अने प्ररूपणाथी तेओ अवश्य प्रभावित थया हशे. अने तेने लीधे तेओना योगसाहित्यमां एवा केटलाय पदार्थो अने शब्दो जोवा मळे छे के जे सामान्यत: जैनदर्शनमां प्रचलित नथी अने बौद्धदर्शनमां ते प्रचलित होवानुं लागे छे. जेमके **श्रद्धा** माटे प्रयोजेलो **'अधिमुक्ति'** शब्द. आ उपरान्त अन्य योगधाराओना तत्त्वो-शब्दो पण तेओनी प्ररूपणामां अवश्य समाया छे. वळी, केटलांक तत्त्वोनी जेम केटलाक शब्दो पण तेओनी प्रतिभानो उन्मेष छे. योगदृष्टि०मां प्रयोजेला आवा विशिष्ट शब्दोनी टीकामां तेओए ते शब्दोना पर्यायो आप्या छे. केटलाक प्रचलित जैन शब्दो अने विशिष्ट शब्दोनी विशिष्ट व्याख्या पण आपी छे. आ शब्दोना आधारे विविध योगधाराओना परस्पर आदानप्रदान अने समन्वय विशे सरस संशोधन थई शके तेम होवाथी तेवा शब्दोनी सूचि बनाववामां आवी छे. ७मा परिशिष्टमां विशिष्ट शब्द अने तेनो पर्यायशब्द मूकवामां आव्या छे, ज्यारे ८मामां जेनी विशिष्ट व्याख्या करवामां आवी छे तेवा शब्दो मूकवामां आव्या छे, जेमां महदंशे जैन पारिभाषिक शब्दोनी साथे केटलाक विशिष्ट शब्दोनो पण समावेश थाय छे. अन्य ग्रन्थोमां प्रयोजायेला आ शब्दोनुं अर्थघटन सुगम बने ते पण आ सूचिओनो आडफायदो छे.

आ प्रकाशननी ध्यानार्हता

आम तो कोइ पण ग्रन्थनी संशोधित वाचना ध्यानार्ह ज होय छे, पण आनी ध्यानार्हता माटे एटले लखवुं पडे के आ ग्रन्थ महदंशे विवेचनोना आधारे ज भणाय छे- भणावाय छे. अने आ भणनाराओ के भणावनाराओ मूळग्रन्थने जोवा-वांचवा लगभग टेवायेला नथी होता. एटले मूळग्रन्थने लगतुं गमे ते काम करवामां आवे, ए लोकोने कशो फेर नथी पडतो. अने एटले ज आ संशोधित वाचनाने अनुसारे विवेचनोमां यथोचित परिवर्तन करवा प्रेरणा करवी जरूरी लागे छे.

एक वातनी स्पष्टता करवानी के पोतानी सामे अशुद्ध पाठ होवा छतां प्रबुद्ध विवेचको जे हदे साचा अर्थघटन सुधी पहोंच्या छे ते नवाई पमाडे तेवुं

छे. छतांय शुद्ध पाठना आधारे थतुं अर्थघटन तेनाथी जुदुं होय तेमां बेमत नहीं. श्लोक ७३मां '**तथाऽप्रवृत्तिबुद्ध्याऽपि**' एवो अशुद्ध पाठ अने तेनी खण्डित टीकाने आधारे थयेलुं विवेचन केटलुं परिवर्तनीय छे ते संशोधित-पूर्णपाठने जोया पछी स्वतः समजाय तेवुं छे. श्लोक ३२मां '**सर्वत्रैव**'नो '**दीनादौ**' अर्थ भले संगत थई जतो होय, पण हरिभद्रसूरिजी '**हीनादौ**' थी जे सूचववा मांगे छे ते केटलुं महत्त्वपूर्ण छे ! श्लोक-१६नी टीकामां '**भगवदवधूत**' नामना स्थाने '**भगवद्दत्त**' के '**भगवदन्तवादी**' व. भ्रमपूर्ण वांचनने लीधे इतिहासादिविषयक ग्रन्थोमां थयेला उल्लेखो पण बदलवा पडे तेम छे. टूंकमां, योगदृष्टिसमुच्चयना तमाम अभ्यासीओए आ सम्पादन अवश्य ध्यान पर लेवा जेवुं छे.

अन्ते, आ पुस्तकना प्रतिभावरूपे विद्वान् मुनिराज पूज्य श्रीधुरन्धर-विजयजी म. ए लखेला पत्रनो केटलोक अंश उद्धृत करीश के जेमां घणुं बधुं समाई जाय छे : "योगदृष्टि मळ्युं. सरस कार्य कर्युं.... जे व्यक्ति गीतार्थ नथी, छेदना ज्ञानथी पूरा मार्गना उत्सर्ग-अपवाद जाण्या नथी, ते आ ग्रन्थोनो उपयोग श्रोताओने हताश थई जाय तेवा ज विचार-प्रवचन फेलाववामां करे छे. आ योगग्रन्थो पूर्वगतश्रुतना अंशो छे. आना उपर अधिकारी व्यक्ति सामे वाचना थई शके. व्याख्यानमां तो बालजीवोनी अधिकता होवाथी आ ग्रन्थो ना लेवा जोइए एवुं मारुं मानवुं छे. अशुद्ध ग्रन्थोना आधारे अशुद्ध प्ररूपणा थाय तेनुं मार्जन कोण करशे ?"

ग्रन्थ - योगदृष्टिसमुच्चयः सटीकः
कर्ता - श्रीहरिभद्रसूरिजी
सं. - आ. श्रीशीलचन्द्रसूरिजी
प्र. - जैनग्रन्थप्रकाशनसमिति - खम्भात, २०६६
प्राप्ति - सरस्वती पुस्तक भण्डार,
११२, हाथीखाना, रतनपोल, अमदावाद-१

श्री विजयनेमिसूरि जैन स्वाध्याय मन्दिर,
१२, भगत बाग, पालडी,
अमदावाद-७